**International Journal of Hindi Research**
**ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22**
**www.hindijournal.com**
**Volume 2; Issue 5; September 2016; Page No. 80-83**

# प्रसाद के काव्य : आरम्भिक रचनाओं में सौन्दर्य एवं दर्शनें

**संगीता पाण्डेय**

शोधार्थी – हिन्दी विभाग, अ0प्र0 सिंह विश्वविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश, भारत।

**सारांश**

प्रसाद जी ने आनन्दवाद की प्रतिष्ठा करके भौतिक संघर्ष से ग्रस्त लोगों को सुखानुभूति कराया है। प्रसाद जी की अर्न्तमान्यता है कि सौन्दर्य और दर्शन मानव के लिए आनन्द का स्वरूप प्रसस्त किया है। उनकी दृष्टि में ''सौन्दर्य और दर्शन'' प्राणिलोक का मूल चिन्तन धारा है जिसका परिणाम आनन्दमयी मानवतावाद की प्रतिष्ठा कहा जा सकता है। प्रसाद के करुणालय की कविताओं में प्रकृति, भाव, कथा, सत्य, सौन्दर्य के साथ दार्शनिक बोध की दृष्टि से कवि ने अपने आधारभूत अद्वैत दर्शन सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की है। उनका आनन्दवाद मानवोचित धारणाओं से सम्बन्धित है। प्रसाद जी की इस काव्यात्मक प्रवृत्ति से प्रभावित होकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचती हूँ कि उनकी रचना ''महाराणा का महत्व'' में राष्ट्रवाद, मानवतावाद, कर्म की प्रधानता और विश्व मंगल की कामना प्रबल थी। भारत भूमि सदैव से ऐसे वीर सम्राट को जन्म देती रही है जिसमें प्राणि मात्र के प्रति दया–भाव और पराक्रम में सुयश के दर्शन होते हैं। प्रसाद जी ने अपनी रचना धर्मिता के द्वारा जनता के हृदय में आत्म विश्वास स्वाभिमान का भाव जगाया है। साथ ही मानवमन की बुराइयों को दूर कर उज्ज्वल भविष्य के निर्माण के लिए सौन्दर्य और दर्शन की प्रतिष्ठा कर काव्य मार्ग प्रशस्त किया।

**शब्द कुंजी :** प्रसाद, काव्य, सौन्दर्य एवं दर्शन।

## प्रस्तावना

### प्रसाद का जीवन वृत्त

काशी के उत्तर–कीर्ति श्री, विद्या और विनय से सम्पन्न भक्ति–प्रधान सुँघनी साहू के माहेश्वर कुल में साहू देवी प्रसाद के कनिष्ठ आत्मज के रूप में श्री जयशंकर 'प्रसाद' का जन्म माघ–शुक्ल द्वादसी सन् 1889 में हुआ था। ''प्रसाद'' जी का यह जन्म बालक रूप में नहीं बल्कि एक युग पुरुष के रूप में हुआ था। काशी में इनका खानदान ''सुंघनी साहू'' के नाम से प्रसिद्ध था। काशी नरेश के बाद सर्वाधिक सम्मान इसी परिवार को प्राप्त था।

प्रसाद के बाबा जी का नाम ''शिवरत्न'' जिन्होंने सुर्ती, जर्दा और तम्बाकू के व्यापार से पर्याप्त धन और कीर्ति अर्जित किया था। ''शिवरत्न'' जी बड़े दानी थे। अर्जित धन का दान प्रेम और श्रद्धा से करना, दोनों के लिए हितकर था, इसी भावना से शिवरत्न जी को ''महादेव'' जैसी निधियों से अलंकृत किया गया था। काशी नगरी में यह शब्द ''काशीनरेश'' एवं ''शिवरत्न'' जी के लिए ही प्रयुक्त था। शिवरत्न जी के सुपुत्र का नाम ''बाबू देवी प्रसाद'' था, जिन्होंने वंश परम्परा का पालन और उत्तराधिकार में प्राप्त समस्त उपदानों को सहेजना आदि इनका उत्तरदायित्व था। ''देवी प्रसाद'' के दो लड़के पैदा हुये– (1) शम्भुरत्न (2) जयशंकर प्रसाद।

जयशंकर प्रसाद का युग रूप में अवतौर मानों शिवरत्न जी के आंगन में साक्षात काशी नगरी में शंकर जी का आर्विभाव हो गया हो। ''प्रसाद का बचपन बहुत खुशहाली और प्रसन्नता में व्यतीत हुआ। वैभवशाली परिवार में जन्म लेने पर भी प्रसाद को तनिक अभिमान नहीं था। लेकिन प्रसाद जी को कम जीवन संघर्ष नहीं करना पड़ा। लगातार आघात पर आघात सहते हुये प्रसाद जी को जो करना था करके ही रहे। ''प्रसाद की विद्यालयीन शिक्षा अति अल्पकालिक ही रही, स्थानीय क्वींस कालेज में केवल 7वीं कंक्षा तक पढ़ सके थे। जब प्रसाद 12 वर्ष के ही रहे थे तो उनके परिवार पर वज्रपात हुआ पितृदेव का स्वर्गवास हो गया। घर परिवार का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व बड़े भाई ''शम्भुरत्न जी पर आ पड़ा। ''प्रसाद'' की पढ़ाई आगे नहीं हो सकी फिर भी शम्भुरत्न जी ने घर पर ही हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फारसी आदि विषयों के गहन अध्ययन की सुविधा अच्छे आचार्यों से उपलब्ध करवा दिया। शम्भुरत्न जी द्वारा यह वह कर्तव्य निभाया गया जो एक अच्छा पिता अपने बच्चों के पठन–पाठन, जीवन के प्रति निभाता है।

संस्कृत विषय में ''प्रसाद'' जी की विशेष रुचि थी, परिणामस्वरूप गहन अध्ययन से प्राचीन साहित्य का ज्ञान, बौद्ध कालीन इतिहास, वेद पुराण, उपनिषद्, स्मृति आदि के चिन्तन मनन एवं स्वाध्यायन से अपना खजाना भर लिया। लड़कपन से ही ''प्रसाद'' को व्यायाम, कसरत से प्रेम था, जिसकी शिक्षा देने घर पर ही एक पहलवान आया करता था। ''उन भुगद्रों की वजन को देखकर जिन्हें प्रसाद जी भाजा करते थे बड़ा ही आश्चर्य होगा कि प्रसाद जी जैसे कलाकर भी उन भुगद्रों को भांजते रहे होंगे।''[1]

''प्रसाद'' जी को संगीत से भी अधिक प्रेम था। उनके निकट सम्बन्धियों का कथन है कि प्रसाद जी ब्रम्ह मुहूर्त में उठकर संस्कृत के श्लोकों की संगीतमयी स्वरलहरी का सर्जन किया करते थे। प्रसाद जी को मन्दिर, फुलवारी और आखाड़ा से भी अपार प्रेम था, जिसके कारण उनके शरीर, आत्मा और मन का उर्जसित विकास हुआ। इन्हीं तीनों स्थूल विषयों को सूक्ष्म विकास साहित्य में भी देखा जा सकता है। घर के पास ही शिव मन्दिर था जिसमें पूजा, संध्या आदि नियमित होता था। स्वयं प्रसाद जी नियमपूर्वक नित्य पूजन किया करते थे। शिव के वे परम उपासक थे। परिवार में इसका अभाव देखकर वे कभी–कभी रुष्ट हो जाया करते थे – जो अपने नित्य की संध्या पूजा नहीं कर सकता वह मेरी श्राद्ध और स्मृति कैसे करेगा। इस प्रकार शिव मन्दिर से अध्यात्मिक प्रेम और फुलवारी से मन की स्वच्छता, सुन्दरता विकसित होती चली गयी। प्रसाद जी को कसरत से शौख था। एक हजार बैठक और पांच सौ दण्ड बैठक एक सांस में लगा लेना प्रसाद की नित्य दिनचर्या थी। इसी के परिणामस्वरूप अन्तिम क्षणों तक प्रसाद जी का शरीर सुगठित, स्वच्छ मस्तिष्क वाला आकर्षण स्वरूप चमकीला बना रहा। जब मित्रों की संख्या बढ़ जाती थी तो प्रसाद जी फुलवारी खुलवाते थे। एक पत्थर पर बैठकर फूलों की सुन्दरता का दर्शन, चिन्तन, मनन, हंसी विनोद, सब कुछ मनोविनोद करना मानो प्रसाद जी का स्वभाव बन गया था।

प्रसाद जी शैव होने के कारण मन्दिर में उत्सव आयोजन के द्वारा आध्यात्मिकता की आस्तिक विचाराधारा से, शंकर जी की भावना से आराधना में बहुत उत्सुक हुआ करते थे। जब प्रसाद जी 17 वर्ष की अवस्था के थे तभी उनके बड़े भाई ''शम्भुरत्न'' जी प्रसाद को अकेले छोड़कर संसार से चल बसे। यह दूसरी विपदा प्रसाद जी को भारवहन करने, उत्तरदायित्व निभाने का साहस बंधा रही थी। प्रसाद के नाजुक कलेजे में बड़े भाई के निधन से गहरा धक्का लगा जो प्रसाद के जीवन का एक विशाल विलक्षण कारण हुआ। परिणामस्वरूप प्रसाद की दुःख सम्भूत भावना का जन्म हुआ। इस समय प्रसाद के सामने दो समस्यायें हो गई, प्रथम बड़े भाई की अपूर्व दानशीलता और शाही खर्च के कारण बढ़ा हुआ पारिवारिक कर्ज। द्वितीय नावालिगपन का फादया लेने के लिए कुछ स्वार्थी सगे सम्बन्धियों ने उनकी जायदात हड़पना चाहा। प्रसाद जी ने इसे सांसारिक घात, प्रतिघात, द्वन्द्व और कोलाहल का साहस पूर्ण सामना किया और इसमें सफल भी हुये। 1929–30 तक समस्त पारिवारिक कर्ज चुका कर प्रसाद जी ऋण भार से मुक्त हो गये।

## ''चित्राधार'' में सौन्दर्य एवं दर्शन

प्रसाद जी की आरम्भिक कविताओं का संग्रह ''चित्राधार'' है। प्रसाद जी ने काव्य क्षेत्र में जिस अप्रतिम प्रतिभा का प्रदर्शन किया, उसके बीज ''चित्राधार'' में निहित हैं। यह सर्वमान्य सत्य है कि प्रसाद जी शुरू में ब्रजभाषा की कोमल शब्दावली में कविता किया करते थे। इस समय में प्रसाद जी की आयु लगभग 20 वर्ष की थी। इस अवस्था की सभी रचनाएँ चित्राधार में संकलित हैं।

''प्रसाद'' के आरम्भिक काव्य यात्रा की ''चित्राधार'' की कविताओं में खड़ी बाली ब्रजभाषा दोनों का प्रभाव बराबर पड़ा है। नवीन विषयों पर उन्होंने ब्रजभाषा में रचनाएँ की परन्तु तत्कालीन काव्य का प्रमाद लेने के कारण कुछ ''चित्राधार'' में संग्रहीत कविताएँ द्विवेदी युग से ऊपर उठकर लिखी गई हैं। प्रसाद का मनोभाव उनकी कविताओं में सर्वत्र प्रसादमयी रूप में दृष्टिगोचर होती है। उन्होंने बदलते क्रम में मानव प्रेम की प्रतिष्ठा की है तथा प्रकृति को विविध रूपों में देखने की सफल चेष्टा भी की है। उन्होंने अपने काव्य में ईश्वर की मान्यता को अद्वैत दर्शन के प्रभाव से प्रतिष्ठित किया है उनके सामने ईश्वरोपासना तथा मानव प्रेम की प्रतिष्ठा सबसे बड़ी उपलब्धि है। चित्राधार की कविताओं में काव्य सौन्दर्य, अर्थ सौन्दर्य, भाव सौन्दर्य, प्रकृति सौन्दर्य, रूप सौन्दर्य, चित्र सौन्दर्य, छन्द सौन्दर्य का विशद निरूपण हुआ है तथा कर्मवाद, भोगवाद, मानवतावाद, आनन्दवाद, अध्यात्मवाद, आत्मवाद, नियतिवादी दर्शन का प्रभाव चित्राधार की रचनाओं में देख जा सकता है क्योंकि प्रसाद का कवि मन में सहानुभूति की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

प्रसाद जी ने मानवतावादी आनन्द की स्थापना के लिए काव्योपासना की है। उन्होंने विरोधी शक्तियों में समन्वय स्थापित किया है तथा इच्छा, क्रिया, ज्ञान इन तीनों की समरसता पर बल दिया है।

## कानन–कुसुम की कविताओं में सौन्दर्य एवं दर्शन

भारतीय काव्य चिन्तन और जीवन दर्शन की परम्परायें महाकवि जयशंकर ''प्रसाद'' मानवता के उज्जवल भविष्य और लोक–मंगल आदर्शों के क्रान्तिकारी स्वप्नदृष्टा और अग्रदूत कवि कुलगुरु कालिदास और भवभूति और दोनों को मिलाकर यदि व्यक्तित्व की कोई मूर्ति खड़ी की जा सके तो वह प्रसाद की उपमा बन सकती है। ''कानन–कुसुम'' प्रसाद जी की प्रथम मोड़ की काव्य यात्रा की अद्वितीय रचना है। इसके सम्बन्ध में ''प्रसाद'' जी ने स्वयं लिखा है – ''प्रियतम जो उद्यान से चुन–चुनकर हार बनाकर पहनते हैं, उन्हें ''कानन–कुसुम'' क्या आनन्द देगें? यह तुम्हारे लिए है। इसमें रंगीन और सादे, सुगन्ध वाले और निर्गन्ध, मकरन्द से भरे हुए, पवराग में लिपटे हुए, सभी तरह के कुसुम हैं और संयत भाव से एकत्र किए गए हैं। भला ऐसी वस्तु को तुम न ग्रहण करोगे तो कौन करेगा?''[2]

''हिन्दी में नई काव्य जान्हवी के भागीरथ – की शिखर यात्रा (1918 से 1936) के सोपान पथ का प्रस्थ – यह कानन–कुसुम है। यहाँ हिन्दी साहित्य की परिवर्ती संरचना के उपकरण अपने प्रभाव में पल्लवित हैं... वे उदीपमान काव्य चेतना के उस आन्तर स्पर्श से पुलकित हैं – जो अपने फल पाक में एक नए साहित्य की वर्चस्व मूर्ति गढ़ सका। मैं साहित्य की प्राणशक्ति प्रसाद वाङमय का यह मौलिक स्वभाव कानन–कुसुम की कविताओं में स्पष्ट है जो एक जो एक बोधिन्य ग्रोध के रूप में परिणत हो गया और विकल्प के कालान्तर में भटकते लोगों को उसके तले संकल्पमयी छाया मिली।''[3]

ऐसे सजग कवि की इस कृति में उसकी सृजन चेतना की एकायिनी वृत्ति का अन्तराल यहॉ सौन्दर्य का दर्शन के रूप में बोध्य है। ''कुसुम–कानन'' अंचल में शीतल मन्द सुगन्ध मलयानिल प्रेरित सौन्दर्य का दर्शन होता है। प्रसाद की रचना उनके संकल्पात्मक दर्शन को प्रकाशित करती है। ''कानन–कुसुम'' की वस्तु में मूल आधार प्रवृत्ति सौन्दर्य और आत्मवाद ही ठहरता है। अतएव इस रचना का मूल प्रतिघात ही वही है उसी पर सौन्दर्य और दर्शन का व्यापक विकास होता है और वही लोकोन्मुखी जीवन को आनन्द भूमि पर अवस्थित करने में समर्थ दिखाया गया है। इस प्रकार ''प्रसाद'' की रचना ''कानन–कुसुम'' की कविताओं में प्रवृत्ति सौन्दर्य साहित्य की भूमि पर तथा आत्मवाद एक तत्व दर्शन की भूमि पर अवस्थित प्रतीत होती है। कवि ने इस रचना के द्वारा समाज को सुख शान्ति में पहुंचाने का प्राकृतिक सौन्दर्य निरूपण का योग प्राप्त किया है। कवि को व्यापक लोक ज्ञान था। यही कारण है कि उनकी रचना ''कानन–कुसुम'' में सम्पूर्ण मानवीय भावों का सत्य, जो चेतना का सुन्दर इतिहास है, व्यक्त हुआ है।

छायावादी कवि अपने विभिन्न संस्कारों के बावजूद जिस वैचारिक धरातल पर पहुंचे वह प्रकृति सौन्दर्य की उच्च भूमि कही जा सकती है। ''कानन–कुसुम'' में प्राकृतिक सौन्दर्य की तीव्र उत्कण्ठा दिखाई देती है।[4]

सौन्दर्य की छुवन जिन माध्यमों का स्पर्ण करती है। लौह हिय ही क्यों न हो, वह सुन्दर वदन और सुखमय सदन में परिवर्तित होकर, अनुपम सौन्दर्य विद्यान करता है। ''प्रसाद'' के काव्य में समाज बोध, आत्मबोध और अध्यात्मबोध के दर्शन एक साथ होते हैं।

''कानन–कुसुम'' की रचनाओं में प्राकृतिक सौन्दर्य का अनूठा दृश्य सहज ही जन–मन अभिराम लगने लगता है। भगवान श्री राम अपने बन्धु लक्ष्मण और भार्या माता सीता के साथ स्फटिक शिला पर आसीन हैं। प्रकृति और प्रभु के बीच सौन्दर्य का आदान–प्रदान हो रहा है। निज प्रियतम के संग कानन में वैदेही सुखानुभूति कर रही हैं। ''चित्रकूट'' का अन्तैस्तल इस सौन्दर्य निरूपण से परिपूर्ण हो उठा है। जीवन के निकट प्रकृति और मानव के कलेवर साज–सज्जा और चमत्कार से बोझिल है। जिसके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार हुआ है।

भातृ–प्रेम भारती संस्कृति का निधि कहा गया है। भारतीय संस्कृति का पूर्ण परिपाक परिवार के मध्य परिलक्षित होता है। पवही विस्तार के तह तक पहुंचकर विश्व जनीन हो जाता है।[5]

भारतीय इतिहास में नारी की स्थिति में अनेक उतार–चढ़ाव दिखाई देते हैं। आधुनिक युग के पदार्पण के साथ ही नारी की स्थिति में तेजी से सुधार होने चला प्रसाद जी की दृष्टि नारी के प्रति अत्यधिक उदार और उदात्त थी। उन्होंने नारी के नैतिक और मानवीय पक्ष को उजागर किया है। जिसे हम नारी सौन्दर्य के अन्तर्गत स्वीकार करते हैं। ''प्रियतम'' कविता के अन्तर्गत कवि ने नारी को प्रिय का पर्याय बताया है।[6]

प्रसाद की दृष्टि नारी के प्रति नैतिक युगानुकूल उदात्त और मानवीय है। उन्होंने नारी को स्नेहशील, सेवा, ममता की मधुर मूर्ति

और विश्व की अग्रजा के रूप में देखने का प्रयास किया है। उनका नारी प्रेम सौन्दर्य, भ्रान्त मानव का पथ प्रदर्शक और राष्ट्र की प्रेरणा का अजस्व श्रोत है।

''कानन–कुसुम'' की कविताएँ सौन्दर्य एवं दर्शन के परिप्रेक्ष्य में यह कहना समीचीन होगा कि ''कानन–कुसुम'' में प्रेम और सहानुभूति की अभिव्यक्ति भी है। उन्होंने विश्व गृहस्थ को नमस्कार करते हुए प्रकृति के साश्वत स्वरूप को मानवता के लिए निधि निरूपित किया है। उस मन्दिर के भथकों, निरूपण निर्भय स्वस्थ को नमस्कार मेरा सदा पूरे विश्व गृहस्थ को।''[7]

''कानन–कुसुम'' की रचनाओं में प्रकृति प्रेम और वैयक्ति प्रेम सौन्दर्य का विपुल रूप से वर्णन मिलता है। उनके हर भाव हर शब्द मानवतावाद ध्वनि से ध्वनित होते हैं। कवि ने ''कानन–कुसुम'' में आनन्दवाद को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। कवि की मान्यता है कि हमारी सांस्कृतिक परम्परा भी प्रसादमयी है। इसी अखण्ड प्रसादमयी आनन्द के ही मानव जीवन की पूर्ण सार्थकता है। गम्भीर, चिन्तन, मनन के पश्चात जब हम भौतिक धरातल से ऊपर उठ जाते हैं और हमारे अन्तस्यक्षु विकसित हो जाते हैं तब इस अखण्ड आनन्द सौन्दर्य की अनुभूति होने लगती है।

कानन–कुसुम की कविताओं में दर्शन बोध शान्त प्रवृत्ति के कवि थे, उन्हें हिंसा और संघर्ष से घृणा थी। इसी दृष्टि को लक्ष्य करके उन्होंने विश्व कल्याण की कामना की। इस दिशा में उन्हें समग्र दर्शन से विशेष प्रेरणा मिली। अधिकांश कवियों ने उनके दर्शन को आत्मसात कर काव्यात्मक अभिव्यक्ति कर सराहनीय प्रयास किया है। अद्वैत दर्शन, प्रसाद के काव्य दर्शन का मूल आधार रहा है। इसके अतिरिक्त कानन–कुसुम की रचनाओं में कवि का दर्शन स्वभावज रूप से भक्ति योग, धर्मयोग, प्रेमयोग, के रूप में प्रस्तुत हुआ है। इस योग संपुंजन पर वल्लभ दर्शन, गोस्वामी तुलसी दर्शन, बौद्ध दर्शन और अद्वैत दर्शन जैसे अनेक दर्शनों का प्रभाव परिलक्षित होता है। जिनका अनुशीलन प्रबन्धकीय दृष्टि से अपेक्षित है। ''कानन–कुसुम'' कृति की रचनाओं में दर्शन निश्चित जीवन दर्शन से अनुप्राणित है। कवि की दृष्टि से चराचर विश्व का मूल कारण एक है और वह ब्रह्म है। सम्पूर्ण विश्व की अभिव्यक्ति है वे विश्व और जीवन दोनों को सत्य मानते हैं विश्व को असत्य या मिथ्या मानना वे गलत बताते हुए कहते हैं कि जीवन की प्रकृति जड़ता की नहीं वरन् चैतन्य आनन्द की है। उस ब्रह्म ने सम्पूर्ण गोचर विश्व का सृजन किया फिर वह स्वयं उसी में प्रविष्टि हो गया। तात्पर्य यह कि ब्रह्म की शक्ति ही हमारे अन्तःकरण मन प्राणा और इन्द्रियों को न केवल सामर्थ्य प्रदान करती है वरन् उन्हें कर्म में प्रवृत्त भी करती है। प्रत्येक वस्तु में उसी की अभिव्यक्ति है।

प्रसाद के अहिंसा को स्वीकार करते हुए गांधी दर्शन की मूल्यवत्ता का विधान किया है। हिंसा विश्व के लिए अभिषाप है। क्रूरता वीरता का स्थान कदापि नहीं ग्रहण कर सकती। वर्जन सत्य का रूप नहीं धारण कर सकता हिंसा में धर्म जन्य साहित्य का विनाश किया है। विज्ञान के साधन सुन्दर ग्रन्थ अतीत की मकरन्दपूर्ण कथा भारत के शिल्प ये सभी हिंसा ने नष्ट कर दिये इस प्रकार प्रसाद ने हिंसा को धिक्कारते हुए अहिंसा को ''अहिंसा परमो धर्मः'' के रूप में अंगीकार किया है।

## करुणालय की कविताओं में सौन्दर्य और दर्शन

प्रसाद द्वारा लिखी गई रचना ''करुणालय'' में भारतीय संस्कृति का अद्भुत दृश्य दर्शाया गया है। आर्यावर्त का ध्वज अपनी अरुण आभा के साथ फहरता हुआ दृष्टिगोचर होता है। भारतीय दर्शन का इतना अप्रतिम चित्रण अन्यत्र दुर्लभ है। हरिश्चन्द्र के शब्दों में – भारतीय निधियों के प्रति व्यक्त की गई अभिलाषाएँ ''करुणालय'' की रचनाओं में देखी जा सकती हैं।[8]

नेपत्य से गर्जन के साथ आकाशवाणी होती है। कहे राजन जब आपको सुत बलि देना निश्चित था तो फिर बलि क्यों नहीं करता। हरिश्चन्द्र वेदना व्यक्त करते हुए विगत स्वर में कहते हैं कि हे देव आप तो सर्वज्ञ हैं संतान की ममता कितनी अगाध होती है हे देव मैं जन्मदाता हूँ। फिर भी अब मैं पुत्र बलि देने में देर नहीं करूँगा आप अपना क्रोध शान्त कीजिए। इस दीन पर दया कीजिये हे नाथ मैं क्रोधित होने का अवसर नहीं दूँगा। वे पुत्र बलिदान यज्ञ करने को तत्पर होते हैं। इस प्रकार कवि ने भारतीय परम्परा के अन्तर्गत सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र के दृढ़ निश्चयी विचार को प्रतिफलित होते हुए दर्शाया है।[9]

करुणालय के द्वितीय दृश्य के अन्तर्गत कानन में रोहित का प्रवेश होता है। रोहित आकाश को देखकर इन्द्र के आश्वासन से संतुष्ट हो अपने कर्म पथ पर गतिमान होता हुआ दृष्टिगोचर होता है।[10]

तृतीय दृश्य के अन्तर्गत अर्जीगर्त और उसकी पत्नी तारिणी का गीत नाट्य दर्शाया गया है। रोहित अर्जीगर्त के कुटीर में पहुंचता है। उसे देखकर अर्जीगर्त राजकुमार होने का भाव व्यक्त करता है और रोहित के कष्ट को जानने की जिज्ञासा व्यक्त करता है। अर्जीगर्त और उसकी पत्नी तारिणी रोहित के कथनानुसार अपना मध्यम पुत्र देने को राजी होते हैं। उनका मध्यम पुत्र सुनःसेफ रोहित के साथ सकरुण प्रस्थान करते हैं। इस आध्यात्मिक नाट्य के अन्तर्गत वैदिक पुरुषों के सचित्र कथ्यों का सुन्दर निर्वाह हुआ है।[11]

''प्रसाद'' की रचना करुणालय के चतुर्थ दृश्य में महाराज हरिश्चन्द्र सिंहासनारूढ़ दिखाई पड़ते हैं तभी सुनःसेफ को साथ लिए हुए रोहित का प्रवेश होता है। हरिश्चन्द्र पिता पुत्र के बीच धर्म की चर्चा होती है, सनःसेफ का भी तक सुना जाता है।

भारतीय दर्शन के अन्तर्गत ब्रम्ह को विश्वनियता कहकर सम्बोधित किया गया है। जिसका सफल निर्वाह करुणालय की रचनाओं में हुआ है। विश्वामित्र धर्म और तम में तत्पर दिखाई पड़ते हैं। झूठे अभिमान को धिक्कारते हुए सत्य और तप की स्थिति को लक्ष्य का इन मनीषियों के बीच संक्रान्त की स्थिति उत्पन्न होती है। इसी बीच सुव्रता का प्रवेश होता है। उव्रता से विश्वामित्र की वार्ता होती है। सुव्रता ने ऋषि को बताया कि हे नाथ मुझे लांक्षित करके ग्राम से निकाला गया था क्योंकि अवसर गर्मिणी हो गयी थी, घूमती हुई ऋषि आश्रम में आई थी और वहीं आश्रम में मैंने प्रसव समर्पण किया, तत्पश्चात मैं अन्तःपुर में दासी बन गई, सब लोगों ने इस कथा को जगत नियन्ता का सच्चा आशीर्वाद कहकर घोषित किया है।[12]

समष्टि रूप से देखा जाय तो प्रसाद की रचना करुणालय कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण रचना है। सर्वांगीण विकास के लिए कवि ने अखण्ड आनन्द प्राप्ति के ध्येय से परम ब्रम्ह की महत्ता को सहज रूप से स्वीकार किया है। करुणालय की कथा पौराणिक है। गीत नाट्य की दृष्टि से लिखी गई रचना दार्शनिक चेतना को सुदृढ़ और शाश्वत भावभूमि पर प्रतिष्ठित किया है। कवि के जीवन का यही चरम साध्य है। जब वह लक्ष्य तक पहुँच जाता है तब उसका मन पूर्णरूपेण स्वस्थ शुद्ध और चैतन्य के आलोक से परिपूर्ण होकर आनन्द लीन हो जाता है। ताप, श्राप, दुःख, दैन्य, संघर्ष की जड़ता तिरोहित हो जाती है।

## ''महाराणा का महत्व'' में सौन्दर्य और दर्शन

करुणालय के एक वर्ष बाद महाराणा का महत्व ''प्रसाद'' की ऐतिहासिक रचना 1914 में प्रकाशित हुई। इसमें कवि ने भारतीयों में राष्ट्रीयता की चेतना और सौर्य को जागृत करने के लिए सशक्त कविताएँ लिखी हैं। प्रसाद जी का यह ''महाराणा का महत्व'' साहित्य अतीत की गौरवगाथा संपुंजन है।

अतीत की स्वर्णिम घटनाओं से परत अतर के प्रति क्षोभ उत्पन्न होता है तथा समाज उससे मुक्ति चाहने का प्रयास करता है। यही कारण है कि प्रसाद ने महाराणा का महत्व के अन्तर्गत हमारा ध्यान

प्राचीन और गौरवगाथा की ओर आकर्षित किया। उनकी दृष्टि में गौरवमय अतीत के सहारे ही गौरवमय भविष्य के निर्माण की आशा की जा सकती है। प्रसाद के अतीत का मुक्त कण्ठ से गान किया है। यवन सेना द्वारा नवाब की पत्नी जिसे हरम कहा जाता है का अपहरण कर कानन के मार्ग से गुजर रहे थे। इसी बीच सहसा उस भूमि में अश्वपद शब्द सुनाई पड़े। सहसा कतिपय राजपूत योद्धा भी उपस्थित हुए। जिसे देखकर यवन पथिक का झुण्ड बहुत घबरा गया। वीरोत्जना की अद्भुत हुंकार सुनकर दसोधत्र यवनों के छक्के छूट गए। दोनों ओर से प्रहार होने लगे। कुछ यवन वीर मारे गए और कुछ यवन सैनिकों को क्षत्री सैन्य ने घेर लिया।[13]

मेवाड़ सम्राट महाराणा प्रताप ने तमककर कहा – ''अनुचित बल से लेना कामसुकर्म है।'' इस अबला केवल से होंगे सबल क्या? इस प्रकार काव्य अनुशीलन के पश्चात यह तथ्य प्रकाश में आता है कि ''महाराणा का महत्व'' की रचनाओं में सौन्दर्य और दर्शन राष्ट्रवाद नारी अभिरक्षा प्राकृतिक सौन्दर्य सत्य के प्रति आस्था तथा कर्म के प्रति निष्ठा का भाव व्यक्त किया गया है। महाराणा प्रताप की दृष्टि में चाहे वह शत्रु की अबला क्यों न हो कष्ट नहीं देना चाहिए।[14]

''प्रसाद'' की दृष्टि में भविष्य एक कल्पना है। अतीत एक अनुभूति। अतः एक कल्पना से दूसरी कल्पना तक पहुंचने की अपेक्षा अनुभूति तक पहुंचना अधिक सुगम है। उनके लिए अतीत की भूमि भविष्य से अधिक ठोस और उपयुक्त थी। अतीत की मधुर स्मृति प्रसाद की कल्पना को स्फुरित करने वाली थी। इसीलिए उन्होंने महाराणा का महत्व रचना में आशा और नवचेतना की झलक खोजने का प्रयास किया।

## प्रेम पथिक में व्यक्त सौन्दर्य और दर्शन

प्रसाद जी ने सन् 1962 में ''प्रेम–पथिक'' की रचना की। ''प्रेम–पथिक'' की भाषा ब्रजभाषा के रूप में परिवर्तन लेकर खड़ी बोली की परम्परा में गतिमान दिखाई पड़ती है। इसमें कवि ने नायक किशोर का अप्रतिम अभिव्यंजना की है। ''प्रेम–पथिक'' में व्यक्त ''सौन्दर्य और दर्शन'' प्रसाद की चिन्तन धारा विश्व प्रेम, मानव प्रेम और आनन्दवाद से अनुप्राणित है। कहावतों के माध्यम से कवि ने नायिका चमेली को तन में मुदित रूप में देखने की ललक की अभिव्यंजना की है।

प्रेम पथिक जिस तापसी से अपनी व्यथा और प्रेम कथा सुना रहा था वह कोई अन्य नहीं उसकी प्रियतमा चमेली ही थी। प्रणय का सम्पूर्ण क्षण वैराग्य में बीत गया चमेली का स्निग्ध सौन्दर्य, लवण्य रूप, घुंघराले बाल, अलस कटाक्ष, उन्मादक रूप सब बदल गये थे। अभिलाषायें रूप बदलकर दर्शन की चिन्तन धारा में परिवर्तन हो चुकी थी। प्रणव का इतना मधुर उत्कर्ष जिसमें स्नेह, संघर्ष, राग–वैराग्य, मिलन–विछोह की चाहत और टीस थी रचनायें प्रेम पथिक सदृश नहीं मिलती। किशोर वाल्य सखी पुतली को तापसी वेश में प्राप्त करता है और विश्व कल्याण की कामना करता है। पिता के समक्ष मित्र की जाया से काम वासना प्रकट कर उपस्थित होती है।[15]

प्रसाद जी का कर्मवाद में विश्वास था। इस सम्बन्ध में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी का कथन है– ''प्रसाद जी दार्शनिक और भावात्मक दृष्टियों से मानव को जीवन संघर्ष के लिए उद्यत कर देते हैं। वे कहीं कृत्रिम सन्तोष का पाठ नहीं बढ़ाते।''[16]

प्रसाद का काव्य प्रेम पथिक प्रणय सौन्दर्य का अनूठा दृष्टान्त लेकर जनमानस को कर्मवाद की महत्ता से ओत–प्रोत करता है। किशोर और चमेली जैसा संघर्षशील ''प्रेम पथिक'' भौतिक जगत में जीने योग्य है। प्रेम पथिक में कवि ने देश प्रेम, दया, उदारता, विश्वप्रेम, करुणा, लोकसेवा आदि की अपरिमिति शक्ति का सौन्दर्य एवं दर्शन कराया है। उनका विश्वास है कि नारी भोग विलास की न तो सामग्री है और न ही हाड़–मांस का पुतला वह पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने वाली सहधर्मिनी और प्रसादमयी प्रकाशपुंज है। इस प्रकार मैं यह कहना यथेष्ठ समझती हूँ कि प्रसाद ने प्रेम पथिक की कविताओं में कर्म वाद, योगवाद तथा आनन्दवाद के प्रति एकनिष्ठ प्रेम, अखण्ड शान्ति को प्रतिष्ठित किया है।

## सन्दर्भ


1. आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी, पृष्ठ 23, जयशंकर प्रसाद।
2. कानन–कुसुम से उद्धृत (समर्पण के पूर्व का आमुख कथन), संस्करण 1984, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 9।
3. कानन–कुसुम (अवतारिका से उद्धृत), संस्करण 1984, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 13।
4. कानन–कुसुम (सौन्दर्य), संस्करण 1984, पृष्ठ 34–35, जयशंकर प्रसाद।
5. कानन–कुसुम, (चित्रकूट), पृष्ठ 66, जयशंकर प्रसाद।
6. कानन–कुसुम (प्रियतम), पृष्ठ 53, जयशंकर प्रसाद।
7. कानन–कुसुम (नमस्कार), पृष्ठ 4, प्रसाद।
8. करुणालय, प्रथम दृश्य, पृष्ठ 10, जयशंकर प्रसाद।
9. करुणालय, पृष्ठ 11, जयशंकर प्रसाद।
10. करुणालय,, पृष्ठ 15, जयशंकर प्रसाद।
11. करुणालय, पृष्ठ 19, जयशंकर प्रसाद।
12. करुणालय, पृष्ठ 30, जयशंकर प्रसाद।
13. महाराणा का महत्व, संस्करण 2012, पृष्ठ 10, जयशंकर प्रसाद।
14. महाराणा का महत्व, संस्करण 2012, पृष्ठ 12, जयशंकर प्रसाद।
15. प्रेम पथिक, पृष्ठ 27, जयशंकर प्रसाद।
16. जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 56, नन्द दुलारे बाजपेयी।